पीड़ा

चक्रवर्ती

भाद्रपद, १८८० शक संवत्

प्रकाशक
सी० वी० स्वामी,
नूतन साहित्य निकेतन,
देवकुंज, डावटन रोड,
बोलारम (आंध्र-प्रदेश)

मुद्रक
कर्मशियल प्रिंटिंग प्रेस,
८३१, बेगमबाज़ार,
हैदराबाद

मूल्य
दो रुपये

दो शब्द

सत्य का शाश्वत पक्ष ही सौन्दर्य है और उसी सौन्दर्य की अभिव्यञ्जना कवि का सहज धर्म है । सौन्दर्य-द्रष्टा के लिए व्यक्तिगत अनुभूति और संस्कारों का उतना ही महत्त्व है जितना जीवन के प्रति शाश्वत दृष्टिकोण को ले कर चलने वालों के सम्मुख होता है । अतः समाज व जीवन से निरपेक्ष हो कर सौन्दर्य-द्रष्टा अपने अन्तर की सुकुमार और सजल भावनाओं का निरूपण नहीं कर सकता । बहिर्जग का कठोर सत्य और अन्तर्जग का नवोन्मेष कल्पना-विभव उसके सृजन में समान रूप से सहायक होते हैं, किन्तु यथार्थ की स्थूलता और अव्यक्त की सूक्ष्मता उसके सृजन के अनिवार्य उपकरण होने चाहिए ।

प्रकृति ब्रह्म के नाते सत है, चेतन है और आनन्दपूर्ण है । जड-चेतन, सत-असत व स्थूल-सूक्ष्म में सर्वत्र ब्रह्म ही प्रकाशित हो रहा है । इसीलिए तो द्रष्टा कवियों के कंठ से फूटा :-

ॐ ईशा वास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृधः कस्यस्विद् गुनम्

इसी चिरन्तन सत्य की रागात्मक अनुभूति और अभिव्यक्ति शाश्वत सौन्दर्य है। किन्तु आज के प्रगतिवादी काव्य और

प्रयोगवादी काव्य के रचयिता उस शाश्वत सौन्दर्य की उपेक्षा कर केवल अनावृत्त स्थूल व पार्थिव यथार्थ के प्रति आकर्षित मात्र हैं। सूक्ष्म की अनुभूति के अभाव में कोई साहित्य न कभी स्थायी और चिरन्तन हो सका और न हो सकेगा। भावभूमि की संकीर्णता और भौतिक चिन्तन के प्राबल्य से प्रगतिवादी काव्य किसी ठोस धरातल पर पूर्णतः प्रतिष्ठित नहीं हो पाया। स्पष्टतः अर्थ-व्यवस्था और स्थूल का चोली-दामन का-सा सम्बन्ध है, किन्तु सूक्ष्म की उपेक्षा कवि के भाव-वैभव और तीव्रानुभूति के अभाव का द्योतक है।

यद्यपि कवि समग्र चेतना का एक विशिष्ट अंशभूत है, तथापि वह एक निरंकुश सत्ता है। वह सामाजिक जीवन का यौवन है और उसकी कृतियाँ एक पृथक् संवेदनीय सत्य! समष्टि की वेदना का आभास व्यक्तिगत भावभूमि के आधार पर ही होता है, अतः कवि मानवीय वेदना को प्रिय की मधुर-स्मृति के सदृश आत्मसात् कर अपने कृतित्व को मानस-पुत्र के रूप में जन्म देता है। फिर भी यदि कोटि हृदयों की सिसकियों से कवि की आँखें सजल होती हों, अनजान अपाहिजों को देख कर उसका रोम-रोम सिहर उठता हो, तथा नीरव चिताओं से उठने वाली धूम रेखाओं से उसका अन्तर क्रन्दन कर उठता हो, तो यह आवश्यक नहीं कि सृजन के क्षण में उसकी लेखनी आँसू बहाए, उसके लिए व्यक्तिगत स्वातंत्र्य अपेक्षित है, अन्यथा स्वस्थ सृजन असम्भव है, सौन्दर्य व आदर्श में सन्तुलन रखना और स्थूल-सूक्ष्म में तादात्म्य करना कठिन है।

कवि चिरन्तन सत्य का दर्शन करता है और सौन्दर्य की अभिव्यक्ति। यही छायावादियों की मूल प्रवृत्ति रही है। इसके विपरीत प्रगतिवादियों ने सौन्दर्य का विश्लेषण किया और सत्य का नग्न निरूपण। किन्तु, रहस्यवादियों ने अखंड और व्यापक चेतन सत्य और असीम सौन्दर्य के कूलों के बीच लोक-मंगल की शाश्वत भावना 'शिवं' को प्रवाहित किया। इसलिए सत्यं, शिवं, सुन्दरम् की अलौकिक भावभूमि पर बहने वाली उनकी त्रिपथगा काल और सीमा को लाँघ कर अमर होती गयी।

दर्शन और रहस्य का सम्बन्ध प्रकृति-पुरुष का-सा है। अतएव भारतीयों के जीवन और चिन्तन में रहस्यात्मकता का होना कोई आश्चर्य नहीं। अखंड और असीम की उपासना, अनन्त और व्यापकता के प्रति सहज आकर्षण तथा अव्यक्त व सूक्ष्म को ढूँढ़ने की प्रवृत्ति हमारे रहस्यात्मक सौन्दर्यबोध के परिचायक हैं। संश्लिष्ट दृष्टि से अवलोकन करें तो ज्ञात होगा कि युगों से प्रवाहित भारतीय साहित्य-गंगा में रहस्य की पवित्रता निहित है। रहस्य ने समुद्र लाँघ कर भारत की सीमा में प्रवेश नहीं किया। रहस्य ही द्रष्टा-कवि की आत्मानुभूति रही है और शाश्वत सौन्दर्य उसकी सच्ची अभिव्यक्ति।

'पीड़ा' यद्यपि मेरा प्रथम काव्य है, तथापि यह एक आकस्मिक रचना नहीं है। इसकी पीठिका में मेरे अबोध शैशव का व्यथित इतिहास है जिसका प्रत्येक पृष्ठ मेरे करुणा-बहुल शिशु-हृदय के क्रन्दन से भरा पड़ा है। कितनी ही छोटी-बड़ी मार्मिक घटनाओं ने

अनजाने में ही मेरे अबोध शैशव को रुलाया। उसी वेदनामयी पृष्ठभूमि में एक आकस्मिक घटना की तीव्रानुभूति का परिणाम प्रस्तुत 'पीड़ा' है।

मेरे अज्ञात क्षणों में जीवन-वीणा से झंकृत वेदना-स्वरों के ये अवशेष गत वैभव के परिचायक हैं। आज चिर-सुप्त-हृदय की वेदना-विनंदित व्यथा-लहरी मेरे निःस्वन-अन्तर में सजल स्मृति के परस से झंकृत हो उठी है।

गणेशचतुर्थी
भाद्रपद २५, शक सं० १८८०

चक्रवर्ती



चक्रवर्ती

आप आन्ध्र हैं और आपकी मातृभाषा तेलुगु है। उस्मानिया विश्वविद्यालय से बी० काम० पास करने के उपरांत आपने हैदराबाद के प्रमुख अंग्रेज़ी दैनिक 'दक्कन क्रानिकल' का कुछ काल तक सम्पादन किया। हिन्दी के प्रति अत्यन्त रुचि होने के कारण आपने नागपुर विश्वविद्यालय से बी० ए० और उस्मानिया विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम० ए० की परीक्षाएँ पास कीं। अब आप युनिवर्सिटी कालेज ऑफ आर्टस् एण्ड साइंस, वरंगल में हिन्दी के प्राध्यापक हैं।

मेरे सुख-दुख की

समभागिनी

भारती

को



यौवन के मधुमय कलरव,
पुलिनों पर मधु-स्मृति छायी,
चिर-दग्ध-प्रणय की लहरी
इन पलकों से टकरायी !

आँसू की अञ्जलि भर कर
इस सूने सजल पहर में,
दुलरायी मैंने पीड़ा
अलसित वेदना कुहर में !

सम्मोहित विरह-मिलन से
वह था सुन्दर क्षण अभिनव
उस कोलाहल में केवल
यौवन का था पागल रव !

कामना खड़ी इठलायी
मकरन्द भरा था प्याला,
विस्मय से पागल मन ने
क्षण भर ही में पी डाला !

संताप खिले प्राणों के
निर्मम तेरी बलिहारी
सूनी-सी कुटिया में फिर
आ बसी वेदना भारी !

एक

पीड़ा

यह तीव्र व्यथा की ज्वाला
पीड़ा का नृत्य नयन में
आशा के अवशेषों पर
उड़ती है धूल विजन में !

भीगी पलकों में सोती
मधुमय यौवन की क्रीड़ा
हँसती है धूल मृदुल में
मेरी चिर पगली पीड़ा !

चिर निःस्वन उर अम्बर में
उमड़े दुख के पागल घन
स्मृति-भार विकल ये मेरे
आँसू का चिर आवर्त्तन !

जीवन की गति क्या देखूँ
है प्राण विकल उल्का सा
सुप्तानल ले कर पल पल
उड़ता उर खद्योतों-सा !

पीड़ा

उस अरुणाई में मैंने
खो डाला मधुमय परिमल
इस गंध-हीन मानस से
अब आँसू ढुलते अविरल ।

इन धूलिकणों में लुट कर
जब जीवन करता क्रन्दन
सौरभ से गिर कर करुणा
करती मेरा अभिनन्दन !

यह पीड़ा प्रतिपल पलती
मृदु मधुरिम दीप-शिखा-सी
साँसों में सिसकी सोती
तारों की तरल-तृषा सी !

व्याकुल रजनी घट-तीरे
जब कुन्जों में थी छाया
घूँघट में लास्य लिये रे
कह दे किसने मुसकाया ?

तुम कहो कौन चुपके से
नक्षत्र-ग्रहों से सज कर
रजनी में तारक-पथ से
आये थे मानस-तट पर ?

सुख-तृष्णा की मादकता
लहरायी प्रिय कण-कण में
लहरों की चिर-चेतनता
उठती गिरती चुम्बन में !

पीड़ा

नीरद-पथ से आ कर तुम
चन्द्रिका-स्निग्ध-सी सविनय
क्यों चले गये भ्रम-झुरमुट
से दे कर अपना परिचय ?

अपने आँसू से भीगा
मैं उठा हुआ था सो कर
विभ्रम विस्मृत था यह मन
तुमसे नव परिचय पा कर।

थे तुम ही एक अलौकिक
परिचय परिमित जीवन में
हारा निर्द्वन्द्व पड़ा हूँ
अपने एकाकीपन में।

जब तिमिर-निमग्न प्रलय में
चिर मुखरित वीणा टूटी
मुख फेर कहो क्यों मुझसे
तुम एक अकेली रूठी ?

स्वप्निल संवेदन-सी थी
वह स्निग्ध रूप की छाया,
चिर छलना में थी डूबी
वेदना विकल्पित काया !

दिग्भ्रान्त अकेली चल कर
तुहिनों की माल पिरोयी
मानस-पथ की मृदु-छाया
में मेरी पीड़ा सोयी।

चिर-त्यक्त प्रणय मन-मंदिर
वैभव इसके मृदु सपने
इन धुली हुई पलकों में
लौटा दीं स्मृतियाँ किसने ?

हरती तम की शीतलता
चिर नवल वासना विरहित
चञ्चल बेसुध यौवन का
उठता है ज्वार अपरिमित !

रे मीत मधुर मानस के
कितना था जीवन प्यारा
तिमिरांत पटों में रोता
एकाकी प्राण हमारा।

शशि कर चुम्बित घन अम्बर
सित छाया ज्योति सिहरती,
जलजों के प्राण पुलकते
चन्द्रिका निसर्ग सिसकती।

पंकिल जल, सित जलजों मे
मकरन्द पिये अलि सोया,
युग-युग उत्पीड़न ढोये
क्यों मिलन हमारा रोया ?

पीड़ा

तारों की मञ्जुल आभा,
अनुदान प्रणय की माया
कुसुमित कुञ्जों पर छायी
मृदु मूक विरह की छाया !

चिर व्याकुल नभ मिलने को
कञ्चन-सी वसुधा पीली
टकराती किन्तु मिलन में
दोनों की आँखें गीली !

अनकही कामना जानें
क्यों नीरद बन धुल जाती
औ' तिमिर-सजग पलकों की
वेदना प्रबल झर जाती !

उलझन-सी बेसुध बातें
अनुराग पला तृण-तृण में
मधुमय प्रतिकार चला क्यों
मेरे सुख-दुखमय क्षण में ?

देखा मैंने सागर का
रोते-रोते सो जाना,
सुर-धनु से मर्माहत कर
घन-अम्बर का रो देना !

प्राणों से प्राण मिला कर
जब छलक नयन नत जाता
सिकता का चुम्बन ले कर
सागर समस्त लहराता !

नव किरणों पर लुट जातीं
चिर उर्मिल अभिलाषाएँ
तंद्रिल पलकों-सी बोझिल
तट की स्वप्निल छायाएँ !

पलकों में प्यास उतरती
जब ढुलक वेदना जाती
जानें क्यों व्यर्थ समझ कर
प्रिय लौट व्यथा है आती ?

पीड़ा का मधुमय नर्तन,
गतिमय नव जीवन धारा
उस मौन प्रलय-पल में भी
हर्षित था हृदय हमारा !

दीपक की स्नेह-शिखा-सी
इठलाती पीड़ा तन्मय
यौवन चिर सरल शलभ-सा
आलिंगन करता मधुमय !

विरहाकुल परिरम्भन में
निश्वासों के मृदु नर्तन
निस्पन्द मिलन वे व्याकुल
प्रिय इन प्राणों के क्रन्दन ।

सुख अवहेलित आकुल मन
करुणा ढुलती प्रियतम की
गूँजती पंथ में प्रतिध्वनि
मेरे इस अन्तरतम की ।

मेरी मधुमय बेला में
नव मेघों के गुरु गर्जन
हूँ खोज रहा पुलिनों में
एकांत शांत में निर्जन।

चिर उन्मन मृग-सी मेरी
यह निस्पृह तृष्णा नीरव
रुक जाती निर्जन पथ पर
सुन कर यौवन का कलरव।

उत्ताल तरंगों की इन
उठती गिरती हिचकी-सी
मिट जाती विरह-मिलन की
विगलित घड़ियाँ सिसकी-सी।

जाती क्यों लौट वहीं पर,
वह हृदय नहीं, निर्दयता
उससे ही टकरा कर फिर
रोती क्यों आहत ममता?

पीड़ा

दुर्दम्य दुखों में पल कर
विह्‌वल मेरी निर्धनता
खल रही और अब मुझको
व्याकुल उर की निर्जनता।

आँखों में छलक उठी है
युग-युग की अरुणिम आशा,
समझा दे कोई मुझको
उर-विनिमय की परिभाषा ?

नीहार तिमिर नीरव नभ
थी धुली हुई पथ-रजनी
ढुलका दी किसने मेरे
क्रन्दन पर करुणा इतनी ?

जब उर के बन्धन टूटे
आहत था अन्तश्चेतन
विस्मृति की शीतल बूँदें
धोएँगी अब सूनापन।

पगली-सी सूनी रजनी
ताकती खड़ी तारकगण,
नयनों के नीरव दल में
आशा रहती करुणा बन ।

पल भर होती क्या देरी
मुरझा जाता उर सूना
ढल कर भी बढ़ जाता तब
पलकों का वैभव दूना ।

निज स्नेहिल-स्रोत सुखा कर
जब तुम निष्ठुर बन जाते
हम उसी एक चितवन में
प्रिय, मधु-पर्व मना जाते ।

सौरभ-से सपने सजते
मधु निद्रा के सुमनों में
निश्वास-पवन से टकरा
गिरते हैं बिखर क्षणों में ।

वेदना विश्व की ज्वाला,
निश्वास हृदय के आकुल,
चुपचाप विचरते रहते
मेरे कुन्जों के खगकुल।

चिर क्रन्दन विश्व अखिल का,
निष्ठुर की निर्ममता,
सुकुमार हृदय में मेरी
रोयी थी आहत ममता।

तन्द्रिल सुख तृप्ति कहाँ वह
उस स्वप्निल अलस जगत का
हँसता हो पुलकित मानस
दिखला कर विभव विगत का।

मानस में उन्मन लिपटी
चिर सुप्त तृषा-सी कोई
मिलने की स्मृतियाँ तेरी
वेदना विकल बन आयीं।

प्रिय मेरे सुख से दुख का
व्यापार नहीं क्या होगा
इन उद्वेलित लहरों का
शृंगार नहीं क्या होगा ?

बिखरा यह अकलुष जीवन
संध्या-सा इस पतझर में
झरती करुणा क्यों तेरी
लोचन निसर्ग-निर्झर में ?

नीहार-तिमिर से जब जब
लौटी जाती यह चितवन
दिखलाते कौन कहो तुम
वेदना निसृत अपनापन ?

धूलि में पुलिन की, क्यों तुम
करती रो रो कर अभिनय
मकरन्द कणों से ढल कर
मुझसे क्यों करती अनुनय ?

कर्णिका-कनक से हिलते
तारकगण उन अलकों में,
कैसी यह विकल प्रतीक्षा
चिर दिन से दिग्पलकों में ?

संध्या - स्वर्णिम - छाया में
मकरन्द-धूलि का अभिनय
मलयानिल के भँवरों में
परिचित दोनों का परिणय ।

उन्मन विधि का नित-नर्तन
आलिंगन के मधु-पल में
अम्बर में व्यंग अनिल का
तम का क्रन्दन जल थल में ।

मुखरित अविरल सिसकी में
वृंतों की विरह-कथायें
द्रुत-पात सजल तारों के
रजनी की विकल व्यथायें ।

पीड़ा

नीरव-सी करुण कहानी
निखरी थी पंकज दल में
वेदना उमड़ क्यों आयी
अम्बर के अन्तस्तल में ?

पुलिनों के प्यासे उर पर
नीरद पलकें झुक आयीं
करुणा के अवगुण्ठन में
वेदना विकल भर आयीं।

दृग-कूलों पर जीवन ने
निज निधि बिखरा दी सारी
जग करुणा माँग रहा अब
पीड़ा दिखला कर भारी।

जीवन की धूलि उठाये
करती थी पीड़ा अभिनय
क्यों मूँद लिया पलकों को
सुन कर मेरा चिर अनुनय ?

अन्तर के वातायन में
प्रिय मुखरित कितने मधु स्वर
टकराती आई कितनी
दुख-लहरी जीवन-तट पर ।

दिग्पलकों में उमड़ी है
मनुहार-भरी निर्झरणी,
लो सिसक चली सुख-संध्या
टकराती तट से तरिणी ।

सुख छोड़ चला तब मुझको
उन्माद लिये जीवन का
संगिनी बनी यह पीड़ा
संताप पिये मानस का ।

पीड़ा

प्राणों से बाँध खड़ी है
जीवन की यह अभिलाषा
धूमिल रजनी - छाया-सी
है अकुलाती मृदु आशा।

उस आशा-प्रत्याशा में
दुखमय पीड़ा की सिसकी
अन्तर को आलोड़ित कर
इन लघु पलकों में झलकी।

जागी निश्वास परस से
जो तृष्णा अविरल तेरी
निखरी है चन्द्रप्रभा सी
पा कर मृदु पीड़ा मेरी।

थी सुप्त यहाँ अब तक जो
जीवन के कोलाहल में
क्यों सहसा वह मधुलहरी
लहराई मानस-तल में ?

केवल क्षण भर का परिचय
उठती पलकें थीं रोयी
कौतुक-सी पर व्याकुलता,
चुपचाप सिसकती आयी।

कहना होगा क्या—अब भी
दिखला कर आँसू धारा
मेरी साँसों में सुन लो
मधुमय संगीत तुम्हारा।

चिर चञ्चल चपला चलती
मेघों के मानस तल में
पर आलोकित हो जाता
मेरा पथ-संकट पल में।

मानस-सुमनों को बिखरे
हो कितना काल चला है
कैसे बतला दूँ किसने
इनका विश्वास छला है।

जीवन में आज अचानक
उद्वेलित हो कर सिहरीं
प्रिय, अलस वेदना-सी क्यों
उर की मादक स्वर लहरी ?

क्या विनिमय करना था जो
आये अन्तिम पहरों में
खो चुका हृदय यह कब से
उन सुख-दुखमय लहरों में ?

डूबे हैं हाय उसी में
कितने अमोल आँसू कण,
स्वर्णिम इतिहास बना कर
मेरे कलरव औ' क्रन्दन !

उन नव किसलय कुड्मल औ'
कानन कुन्जों में तेरे
देखो सित सिकता कण में
अब भी हैं आँसू मेरे ।

मेरे मानस में मदिरा,
है सतत व्यथा अम्बर में
रे विरह्-कथा अब लिख दी
किसने मेरे अन्तर में ?

श्यामल घन की चिर अलसित
फैली उत्कण्ठित बाहें
दिग्पलकें भीग उठीं प्रिय
सुन कर अन्तर की आहें !

जाने क्यों धीरे से जब
छलता वातायन सूना
शत शत लहरें छू जातीं
प्राणों का कोना कोना ।

उन मधुमय रूपों में प्रिय
पा कर प्रतिबिम्ब, तुम्हारा
फेनिल लहरों में उठता
सुख-दुखमय द्वन्द्व हमारा।

यौवन-तट पर जब होता
कोलाहल सुधि-सा परिचित
लहराता काल सलिल में
जीवन सुख-दुख से चर्चित।

अक्षय निधि को पीकर मैं
करता शृंगार अधर का,
दे जाता कौन व्यथा है
अपने व्याकुल अंतर का?

निखरी थी धूलि-कणों में
जब जीवन की परछाँई
नीरवता उतर गगन से
मेरे मानस पर छायी।

उस विजन-प्रांत में मधुमय
कितना परिमल है बिखरा
धुल जाती विषम कलुषता
उर-दग्ध विभव में लहरा।

वह मधुमय छलना थी, हाँ,
उन पलकों की भाषा में
था नीरव नीरद नर्तन
उर–अम्बर की आशा में।

उन तन्द्रालस सपनों में
होती थी बेसुध बातें
वह स्पर्श-मधुर, औ' क्रन्दन,
फिर शेष विरह की रातें।

प्रालेय प्रबल - धारा - सी
जब लौट वेदना आती,
नव भाव विकल विप्लव में
जग सुप्त चेतना जाती।

वेदना विनन्दित स्पन्दन
भर जाता जगत निखिल में,
रह पातीं ये मुक्तायें
फिर नहीं पलक-अञ्चल में।

जीवन के अक्षय खण्डहर—
अस्फुट स्वर, कोमल-स्पन्दन
परिरम्भ-मिलन, छल-चुम्बन
कुछ सिसकी औ' कुछ क्रन्दन।

पीड़ा यह वहीं विचरती,
नव धूल - धूप - छाया - सी,
मन्दार मलय के सौरभ,
औ' मन्त्र-मुग्ध माया-सी।

बिखराती संध्या-बाला
जब सौर-जगत की माला
जल उठती है प्राणों में
जीवन की शीतल ज्वाला !

अनुराग विकल लहरों में
मुख-चन्द्र स्वयं छिप जाता,
संकेत सरल सीपी का
फेनिल घूँघट हट जाता।

जाता कोई जब धीरे
चन्द्रिका लिये जलदों में
चिर तप्त तिमिर रोता तब
छिपकर अविरल जलजों में!

पीड़ा

जब प्राण-पुलिन पर मेरे
पीड़ाएँ सोती तन्मय
इस दृग संचित सिसकी से
सुख-दुख का होता परिणय।

बँध पाये तार न टूटें
प्रिय कैसे कहूँ कहानी
चपला-सी दौड़ रही है
पीड़ा मेरी मनमानी।

सस्मित पलकों में पा कर
निस्पृह यौवन की माया
मकरन्द भार लिये कोई
चुपचाप हृदय पर छाया।

भीगी स्मृतियाँ थीं मेरी
जो लहरों सी बलखायीं
अन्तर-कूलों को छूकर
दिग्पलकों से टकरायीं।

कामना खड़ी उतरी थी
तम के उस नीरव तट पर,
वासना विकल छायी थी
मानों यौवन से छक कर।

सुन्दरते ! तुम चिर मधुमय
चिर मादक मृदु अभिनय-सी,
यौवन की परछाईं में
अविचल आगत विस्मय-सी।

घन-बिजली लूट चुकी तब
रजनी की व्रीड़ा सारी,
इस रिक्त भाल का पोछूँ
कैसे कलंक यह भारी ?

पापों के कोलाहल में
मैंने मदिरा थी पी ली,
उस सुप्त व्यथा के पल में
रूठी थी नियति अकेली ।

पल-पल में पगली तेरी
पलकें करती थीं पूजन,
मानस मंदिर में पीड़ा
तब ढूँढ़ रही थी जीवन ।

यह तारक-मंजुल छाया
प्रत्याशा महामिलन की,
हूँ खड़ा ढूँढ़ता तुमको
मैं खा कर शपथ प्रणय की ।

युग-युग से अवहेलित था
परिमल-स[illegible]किल पथ पर
निश्वासों की छाया में
लौटा हूँ दृग-जल ले कर।

मेरी उर दग्ध चिता पर
जब अभिलाषाएँ जलतीं
वेदना-विभूति बिखरती
सोई सित-रेख मचलती।

कितनी दुख-रजनी में, था
सबने मुझको बहलाया
निर्मोही किन्तु अरे क्यों
तुमने भी आज भुलाया ?

मधु-स्मृतियाँ लो सोयीं
सस्मित मेरे स्पन्दन,
जड़-चेतन की बाहों में
जागा है केवल क्रन्दन।

मधुमय वरदानों में मैं
भूला निर्द्वन्द्व पड़ा था,
मेरी अन्तिम सिसकी पर
कुछ दुख-मकरन्द उड़ा था।

उस अम्बर के छल-नीरद
नीहार-दृगों के अभिनय।
कैसे दूँ व्यथित हृदय से
अनुदान विकल वह सविनय?

जब गीली पलक उठायें
मेरी निर्धनता रोयी
तब मेरे भग्न-हृदय से
मूर्च्छना विकल टकरायी।

मैं बेसुध हो कर गाया
विस्मृत जीवन को पी कर,
कितनी रातें, कितने दिन
पलकों में आँसू ले कर।

अपलक पलकों की छाया,
मानस मरुथल-सा सूखा,
सुनसान नयन के नीचे
चलता हूँ रूखा-रूखा ।

वह नीरव निष्प्रभ रजनी,
मुखरित तारों की सिसकी,
ढुलती सुनसान पहर में
जाने क्यों करुणा किसकी ?

नीरद से ढँक दिग्पलकें
ढुलका दो बूँदें जातीं,
इन मानस मरु-स्रोतों में
कितनी ममता भर आती ।

सपनों में जब धुल जाती
सिसकी-सी क्रन्दित रातें,
दृग-तट पर रह जाती हैं
कुछ उल्काओं की घातें।

निर्जन सिकता-सित तट पर
निस्पृह तृष्णा हठ करती,
विश्वास दिलाऊँ कैसे
वह मादकता छल करती।

अम्बर की कुहेलिका में,
छिप जाता शीतल हिमकर,
वह विकल वेदना मेरी
बलखाती नीलम पथ पर।

मेरे जग के केवल तुम
साथी–चिर परिचित सपने,
जीवन का रोना ले कर
चलते हम पथ पर अपने।

मेरे इस विश्व-कुहर में
लुट गये सभी सुख अपने,
मैं दूर चला ले कर बस
कुछ आँसू औ' कुछ सपने।

रजनी शीतल सित-शैय्या,
उर-सिन्धु विकल था सोया,
निर्बन्ध क्षितिज के ऊपर
तारक एकाकी रोया।

जीवन - सागर से मेरे
चुन-चुन कर सुख-मुक्तायें
तुम छोड़ गये हो संध्या-
सिकता पर पग-रेखायें।

प्रतिदान प्रणय पल की मृदु
कैसे भूलूँ निर्ममता,
मेरा ही कोष लुटा कर
छिड़का दी थी निर्दयता।

मैं घूम पड़ा आँसू से
प्राणों का अर्घ्य चढ़ा कर,
ढुलकाई करुणा उसने
क्यों मुझको पुनः बुला कर ?

उस महाशून्य में जब तक
थी गूँज रही उनकी ध्वनि,
मैं रहा घूमता बन कर
उनकी ही सजल प्रतिध्वनि !

इतिहास नहीं है मेरा
विह्वल गति अस्त-उदय का,
मैं रहा ढूँढता उनको
ले हाहाकार हृदय का।

जागी हैं अब विस्मृतियाँ
यौवन के सूने क्षण में,
चञ्चल–वारिद– वनिता–सी
पलतीं मेरे जीवन में ।

उतरी थी फेनिल लहरी
तिमिरान्त पहर के पट में,
अब प्राण भीगता आकुल
प्रत्यूष प्रतीक्षा तट में।

मर्मर अन्तश्चेतन का
कोलाहल राकानिधि में,
अनजान अरे! पर सिसकी
क्यों उतर पड़ी दृगनिधि में?

आओ, हे संयत स्वर की
स्पृहणीय रागिनी मृदु तुम,
चिर अनस्तित्व से झंकृत
पीड़े! रमणीय मधुर तुम।

जो विश्व-वेदना सिहरी
जीवन के निश्वासों में,
उन्मुक्त तृषा-सी आयी
मुझसे उलझी बाहों में।

क्या कम था उनका अनुग्रह
दे गये रिक्त जो प्याली,
उन्माद सिंधु में भर दी
मधु-मादक बूँद निराली।

जब बन्दी थे हम उनके
यौवन के पहले क्षण में,
मेरे भी कितने सपने
धुल आये आँसू-कण में।

आहत है प्राण इधर यह
कुसुमों के जड़-शूलों पर,
विश्राम कहाँ लहरों को
राका – यौवन –कूलों पर ?

कितनी सुनसान पहर में
भीगी जो सजग व्यथाएँ,
जीवन के कोलाहल में
लो आयीं पलक उठाए।

तारक-पथ में नीरव तुम
रुकते क्यों चलते-चलते,
सुखकर मेरे मृदु सपने
साकार, अधूरे ढलते।

दुख फैल रहा है मन का
सुख से पीड़ा पलने दो,
अभिलाषायें मानस की
अब धू-धू कर जलने दो।

रहने दो और न छेड़ो
निर्मम इन मनुहारों को,
रो रो कर सोयी हैं ये
पलकें निहार तारों को।

चिर तृष्णा गई छोड़ जो
कलुषित कलंक जीवन में,
वह मरीचिका-सी छलती
मुझको अब इस मधुवन में।

इस बीहड़ पथ की विस्मृति,
भटकी भीगी – छाया–सी,
अन्तर में मुझे छिपा कर
सिसका करती माया-सी।

कैसे समझाऊँ अपने
सूनेपन का यह रोदन,
हो गये मौन जब मेरे
चिर मुखरित सिसकी-स्पन्दन।

मेरे चिर विश्व-विकल में
दुखमय कोलाहल कितना,
मैं एक अकिञ्चन हूँ अब
जीवन का ले कर सपना ।

जीवन-पथ पर एकाकी
सुख-दुख मिलते हैं ऐसे,
वह मादक स्वर्णिम संध्या
काली रजनी से जैसे ।

परिबन्ध शिथिल प्राणों के
पतझर-सी यह नीरसता,
व्याकुल है मेरी पीड़ा
पीने को अब समरसता ।

छलकी है मानस-प्याली
सामीप्य अधर का पा कर,
कितनी मादक है छलना
रहता हूँ आँसू पी कर ।

वेदना-सजग पथ से ही
यह लौट हृदय है आया,
अपराध निरीह प्रणय का
सपनों से नीड़ बनाया ।

इन पलकों के सुख-सपने
जागे थे सिसकी ले कर,
किसने सुला दिया उनको
धीरे से थपकी दे कर ?

कैसे दिखलाऊँ उर की
यह चिर पीड़ित व्याकुलता,
भीगी पुतली में रोती
चुम्बन-चर्चित विह्वलता ।

कानन की नीरवता से
है स्वप्न तिरोहित होता,
इस चिर निस्तब्ध निशा में
सुख भी जग कर है सोता ।

मानस के गोपन-वन में
तंद्रिल पलकों का खिलना,
क्षण भर के मधुर-मिलन में
सुख-वैभव का जग खिलना।

आँसू की शीतलता से
प्रतिदान प्रणय का खिलना,
चिर स्वप्निल नीरवता में
मेरे दुख का उठ मिलना।

है दौड़ सुखद जीवन की
ले कर सुख-दुख के दावे,
अवकाश कहाँ साँसों को
जो तेरी करुणा पावे ?

मधु बूँद मिलन की पल भर
करती अधरों को गीली,
संताप पिला कर राका
लौटा लेती निज प्याली।

मेरी पीड़ा का नर्त्तन
तेरे मधुमय बन्धन में,
मधुमास खिले हैं मेरे
उन अविरल आलिंगन में।

क्यों बन्द हृदय की वीणा
कितना मधुमय कलरव था,
गूँजेगा क्या न यहाँ अब
कुञ्जों में जो मधुरव था ?

जब मृण्मय दीप जला कर
प्रिय पगली-सी बलखाती,
सीमाएँ तोड़ हृदय की
पीड़ा बनती दिग-व्यापी।

पूनम की बेसुध रातें,
सुख-सपनों में सो जाता,
जागृति में आँसू ले कर
मैं फिर जग में खो जाता।

मकरन्द बना पथ का दुख
छविमान कनक से दृग-जल,
तत्काल परस पीड़ा ने
कर दिया मौन औ' अविकल।

पीड़ा

मेरा यह उन्मन जीवन
दुर्गम पथ के राही-सा,
चिर विकल सिंधु में तेरे
भटका करता राई-सा ।

क्या गूँजेगा वह स्वर-मधु
इस निःस्वन वन में सारा,
जब तम के उपकूलों में
रोता हो प्यार हमारा ?

अभिशप्त क्षणों में छिप कर
सिसकी थी मेरी क्रीड़ा,
उनकी थपकी से मीठी
रोने लगती यह पीड़ा ।

इस मानस-मरु में बहता
करुणा का स्रोत तुम्हारा,
कलरव बन क्रन्दन सोता
धुल जाता कलुष हमारा ।

सुख-शून्य विकल भू पर जब
चिर पावस पल-पल रोता,
आँखों का वैभव दे कर
यह अन्तर भीगा होता ।

उस तिमिर-प्रलय आँधी में
गिर नीड़ गया जब होता,
उस बीहड़ शून्य विजन में
केवल कवि का स्वर होता ।

यह निर्जन नीरव जीवन,
साँसें थक कर हैं बिखरी,
इस अन्तराल में मेरे
मचली अन्तिम स्वर-लहरी ।

मैं अविकल ढूँढ़ रहा हूँ
मधु-स्रोत विमल वह धारा,
जिसके दोनों कूलों पर
हँसता था प्रणय हमारा ।

मेरे चिर सूनेपन में
पीड़ा का प्रणय-सजाना,
मानस-तट पर लहरों-सा
विधि का नर्तन मनमाना ।

यह मर्माहत सूनापन,
प्राणों की बिखरी बातें
वीणा की स्वर-लहरी में
धुलती हैं मेरी रातें।

कैसे भूलूँ बोलो, प्रिय,
चुम्बन—चर्चित हो जाना,
तेरे स्पन्दित प्राणों में
मेरी सिसकी का सोना ?

हे विकल वेदने ! आओ
दृग-पथ से चलते-चलते,
सुन, धैर्य नहीं प्राणों को
लो हम भी कुछ कह चलते।

युग युग के साथी मेरे
आओ तुम एक अकेले,
इस नीरव निर्जन पथ पर
हम दोनों चिर दिन खेलें।

चेतनामयी तुम सुन्दर
प्रिय प्राण अमर हो जावे,
ये अकलुष पीड़ा मेरी
उस महामिलन में सोवे।

है सुख-दुख से अनुप्राणित
पीड़ा इस अन्तरतम में,
विश्वास-विसर्जित सब का
इस निर्वासित जीवन में।

थी गूँज रही प्राणों में
जो विकल रागिनी मेरी,
हो गई व्याप्त अम्बर में
मादकता पा कर तेरी।

संसृति के स्वप्निल साथी
कुहुरित कुञ्जों में उतरो,
इन धूलि-कणों में अविरल
ममता बरसा कर विचरो।

था कितनी बार उठाया
तुमने प्रिय सम्बल दे कर,
पर सुला रही विधि मुझको
अब अपना सब बल ले कर।

यह नवल रागिनी मेरी
कर हाहाकार रही है,
करुणा की व्यथित कहानी
प्रिय बन मनुहार रही है।

प्रिय विरहाकुल दृग-तट पर
जीवन को लहराने दो,
हाँ, सीपी की तृष्णा में
इन साँसों को रोने दो।

रागिनी रुद्ध, क्षत वीणा
श्लथ अंगुलियाँ, व्याकुल मन,
अन्तर के द्वन्द्व शिथिल सब
है विधुर म्लान यह जीवन ।

ढुलकी करुणा की प्याली
जब उठी सजल व्याकुलता,
वह चली अकेली मेरी
चिर निर्वासित चंचलता ।

जब सिसक उठी यह पीड़ा
अवशेष तिमिर अम्बर में,
जीवन अभिशाप बना फिर
वरदानों से क्षण भर में ।

चिर शांत निलय के नीचे
सोया सुख धूलि कणों में,
रो-रो कर ढुलक उठा पर
चिर दुख मकरन्द कणों में।

कैसे लूँ छिपा दृगों में
पीड़ित उर की व्याकुलता,
जीवन के पुलिनों से जो
टकराई चिर-विह्वलता।

अब जीवन पात्र उठाये
लो भीख माँगती साँसें,
अनुदिन चल कर बन जातीं
जो स्वयं काल की ग्रासें।

यह मानस-तट है सूखा
पर सुख लहरी टकराती,
मेरे दुख-दग्ध क्षणों पर
धूमिल किरणें लहरातीं।

पंकिल लहरों में जीवन
मधु-भाल उठा कर सोता,
जलजात हृदय का मेरा
वैभव बिखरा कर रोता।

चाँदनी बरस थक जातीं
सागर चुप हो सो जाता,
ऐसे उस आलिंगन में
रोमाञ्च मधुर हो आता।

क्यां कर लोगे दो बतला
अपने इस नेह-डोर से ?
आई यह गति मन्थर हो
तेरे उस नयन-कोर से !

अन्तिम रेखा यह धूमिल
उठती चिर शान्त चिता से,
हो अभिषेक रहा किसका
मेरी अनजान व्यथा से ?

चिर धूमिल रजनी ज्वाला
सिसका करती जीवन में,
सब पाप स्वयं जल जाता
रह विभूति जाती क्षण में ।

चिर अनन्त के चरणों में
मेरा हो प्रणय निवेदन,
शृंखला मुक्त प्राणों का
हो नित्य अमर अभिवादन ।

विस्मृति के अवशेषों में
साधना सहज मधुमय हो,
पीड़ा के मृदु हाथों में
यह जीवन मंगलमय हो।

सिसकी साँसों से निखरा
जीवन का यह क्षण-क्षण हो,
निर्वेद शून्य जलदों-सा
दुख का पागल विचरण हो।

उस मुक्त मूर्च्छना मधु से
पीड़ा का चिर नर्तन हो,
वेदना विकल लहरी का
मधुलय में परिवर्तन हो।